संगीतशिक्षा एवं मनोविज्ञान

प्रा. स्नेहाशीष ज. दास
संगीत विभाग प्रमुख, महिला महाविद्यालय, अमरावती

सारांश :-
एक संगीत शिक्षक में विद्वत्ता, संगीत विषय का अच्छा ज्ञान, अच्छा आचरण आदि गुणों का होना तो आवश्यक है ही , साथ ही इस विषय को आकर्षक रुप से विद्यार्थियों के सामने रख सकने की प्रतिभा का होना भी अत्यंत आवश्यक होता है | जिससे विद्यार्थियों के मन में सीखने की इच्छा जाग्रत हो और वे मन:पुर्वक इस विषय को आत्मसात कर सकें | इसके लिए संगीत शिक्षक को विद्यार्थियों के मन का विज्ञान अर्थात् मनोविज्ञान के ज्ञान से अवगत होना आवश्यक होता है और यही इस शोध प्रबंध का मुख्य उदेश्य है |

प्रस्तावना :-

सामान्य तौर पर देखा गया है, कि शास्त्रीय संगीत की अभिरुचि बच्चों में नहीं के बराबर होती है, परंतु संगीत के प्रति आकर्षण अवश्य होता है, चाहे वह संगीत माँ की लोरी में छुपे स्वर रुप में हो या फिर उसके पीठ पर दी जानेवाली थप्पी में छुपे लय रूप में | इस प्रकार बचपन से ही संगीत के विभिन्न अंगो से वह जुड़ता जाता है, और यही संगीत यदि अनिवार्य रूप से उनको सिखाया जाए, तो वह उसमें रूचि लेंगें यह आवश्यक नहीं अर्थात् उनमें संगीत का ज्ञान कराया जाए, इसके लिए उनके मनोविज्ञान को समझना आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य भी है |

मनोविज्ञान कि दृष्टि से यदि संगीत शिक्षण के विभिन्न अवस्थाओं को देखें, तो हमें चार अवस्थाओं में यह शिक्षण उनके विभिन्न मानसिक स्तर के अनुरुप, विभिन्न प्रयोगात्मक शैलियों के आधार पर दिया जाना चाहिए, जिससे उनकी विशिष्ट अवस्था के मानसिक स्तर एवं सिखाये जाने वाले सांगीतिक स्तर में सामंजस्य स्थापित हो सके | मानवीय जीवन की चार अवस्थाएँ इस प्रकार है |

(सा) शैशव अवस्था (रे) बाल्य अवस्था (ग) कुमार अवस्था (म) प्रौढ़ अवस्था

(सा) शैशव अवस्था

जन्म से लेकर पाँच वर्ष तक की अवस्था यानि शैशावस्था | इस अवस्था में शिशु पालकाश्रित होता है एवं इस अवस्था में संगीत-शिक्षण भी विशेष रुप से पालक पर ही निर्भर होता है | इसके अंतर्गत सुरीले व मधुर गानों को सुना-सुनाकर उसमें संगीत का संस्कार कराना चाहिए | मनोविज्ञान के दृष्टि से विचार करें, तो इस अवस्था में उनके मन में जो संस्कार होता है, उसका परिणाम जीवन के अंतिम क्षण तक विद्यमान रहता है | तीन से पाँच वर्ष की आयु तक, शिशु को आसान शब्दों वाली आकर्षक रचना वाली एवं लयप्रधान गीतों को सुनाया एवं सिखाया जा सकता है | इस आयु में लय की ओर शिशु का विशेष आकर्षण होता है,जो स्वाभाविक भी है | जन्म से ही वह आस-पास हो रही सभी बातों एवं क्रियाकलापों का अवलोकन करता भी है और अनौपचारिक रुप से उसे आत्मसात भी करता जाता है | इसी कारण, शिशु के चलने बोलने आदि में जो लय-तत्व विद्यमान होता है, उसे हम उसका स्वाभाविक या नैसर्गिक गुण मान लेते हैं | अत: उनमें उन गीतों का संस्कार कराया जाए, जो लयप्रधान तो हो ही, साथ ही साथ उनमें उन शब्दों को पिरोया गया हो, जो शिशु के लिए परिचित एवं मनानुरुप हो | ऐसा करने पर वह उन गीतों को बार-बार सुनने एवं गाने हेतु लालायित होगा, जिससे उन गीतों में विहित स्वर एवं लय प्रवाह को वो अनजाने में ही स्वाभाविक रुप से आत्मसात करता रहेगा |

(रे) बाल्य अवस्था

छह वर्ष की आयु से लेकर बारह वर्ष तक की अवस्था को बाल्यावस्था कहा गया है | इस आयु में बच्चे बड़े ही बेधड़क एवं आत्मविश्वास से भरपुर होते है | किसी कार्य को ठीक से न कर पाने पर, लोग उसपर हँसेंगे या कुछ कहेंगे, इस बात की वो परवाह नहीं करते | अत: इस आयु में ही उनका स्वराभ्यास करा लिया जाना चाहिए, जिससे वो नि:संकोच व आत्मविश्वास के साथ स्वरोच्चार कर सकें, बारंबार ऐसा करते रहने के लिए प्रेरित किए जाने पर उनके मन में अनुशासन का भी बोध होगा, जिससें स्वर भी व्यवस्थित रीति से लगने लगेगा |

इस आयु में बच्चे अत्यंत जिज्ञासु भी होते हैं | उनके मन में जिज्ञासारुपी प्रश्नों एवं शंकाओं का भण्डार विशेष रुप से पाया जाता है | अपने मन लायक या समाधानकारक उत्तर न मिल पाने तक, वे किसी भी बात को समझने या जानने के लिए प्रश्नों की बौछार करते रहते हैं | कई बार ऐसा भी देखा गया है, कि बातों के संबंध में उनको पहले से ही जानकारी होती है, उसे conform करने के लिए भी वे बार-बार उस बात से संबंधित प्रश्न पुछते हैं | उनके ऐसे व्यवहार से कई बार पालक अथवा शिक्षक का चीढ़ जाना स्वाभाविक ही होता है | अतएवं ऐसा न कर, हमें आस्थापूर्वक उनकी शंकाओं का निराकरण बार-बार करते रहना चाहिए, इससे उनको प्रोत्साहन मिलेगा और वे कितना ही परिश्रम करने हेतु तत्पर रहेंगे | एक बार उनका मन जीत लिया, कि हमारा काम आसान हो जाता है | इसी अवस्था में उनकी क्षमतानुसार प्रचलित रागों की बंदिशों या रागाश्रित गीतों को सुनने एवं सीखने, याद करने हेतु प्रेरित भी किया जा सकता है | संगीततज्ञों के चरित्र का वह भाग जिसे सुनकर बालक के मन में स्फूर्ति आ जाए, कहानी के रुप में सुनाया जा सकता है | इन सबके लिए तरह-तरह की ध्वनिमुद्रिकाओं को भी उपयोग में लाया जा सकता है, जो आज सहज उपलब्ध

भी हो जाता है |बाल्यावस्था में चीजों (वस्तुओं) का संग्रह करने का गुण भी बालकों में विद्यमान होता है | उनमें विद्यमान इसी गुण का लाभ लेते हुए, विभिन्न गायक-वादकों के चित्र, वाद्यों के चित्र, समाचार-पत्रों व मासिक-पत्रों में आए विभिन्न प्रकार के सांगीतिक चित्र एवं विभिन्न प्रकार के संगीत पर लिखे गए लेखादि का संग्रह करने हेतु उन्हें प्रेरित किया जा सकता है | इतना ही नहीं विभिन्न प्रकार के खेल आयोजित कर भी यह विषय रुचिकर बनाया जा सकता है |

(ग) कुमार अवस्था

तेरह वर्ष की आयु से लेकर अठ्राह वर्ष तक की अवस्था यानि कुमारावस्था | इस अवस्था में विद्यार्थी प्रसिद्धि का अंधानुकरण करता है | अपने पसंदीदा व्यक्ति या कलाकार के जैसा दिखने व बनने का वो भरसक प्रयास करता है और ऐसा करते समय वह किसी की सलाह लेना या किसी का हस्तक्षेप करना पसंद नहीं करता , बल्कि अपने स्वतंत्र विचारों द्वारा ही वो ऐसा करता है | अत: ऐसी अवस्था में संगीत शिक्षकों की जिम्मेदारी और बढ़ जाती है, क्योंकि इस अवस्था में यदि विद्यार्थी अपने आदर्श व्यक्ति या कलाकार के चुनाव मे गड़बड़ा जाता है, तो आगे उसे इसकी कीमत भी चुकानी पड़ सकती है | अत: संगीत विषय के विशिष्ट व्यक्तियों का एवं पवित्र आचरण करने वाले व्यक्तियों का आदर्श उनके समक्ष रखा जाना चाहिए |

इस अवस्था में विद्यार्थी संकोची वृत्ति से भी ग्रस्त पाया जाता है | अत: कला विषय में प्रावीण्य प्राप्त करने हेतु उनका आत्मविश्वास बढ़ाया जाना अत्यावश्यक होता है | इसके लिए पहुँचे हुए कलाकारों की आत्मकथा एवं उनकी कला क्षमता आदि की ओर उनका ध्यान आकृष्ट कर उनके आत्मविश्वास को बल दिया जा सकता है | इतना ही नहीं विभिन्न प्रकार के आयोजनों में गाने, बजाने अथवा नृत्य करने का अवसर उनको उपलब्ध कराकर उनको सामाजिक स्तर पर अपना हुनर प्रस्तुत करने एवं उससे मिलने वाले प्रतिसाद से सीखते रहने का अनुभव भी प्राप्त कराया जा सकता है | इससे तरह-तरह के कार्यक्रमों में ईश:स्तवन, स्वागतगीत, भक्तिगीत, भावगीत, देशभक्तिगीत आदि कई प्रकार सुनने, सीखने एवं समझने का अवसर भी उनको प्राप्त होगा |

इस आयु वर्ग के विद्यार्थी को कोई भी वस्तु बिना किसी परिश्रम के प्राप्त हो जाए, तो उस ओर उनका रुझान अधिक पाया जाता है | जिस कार्य को करने में श्रम पड़ता हो या जो कार्य कठिन श्रम वाला हो, ऐसा कार्य करने में उनका प्रयास कम ही होता है | अत: यदि इनको संगीत विषय की ओर प्रवृत्त करना है, तो इसके लिए उनके मन में इस विषय के कठिन न होने का भरोसा देना आवयक होगा | भले ही संगीत शिक्षकों को यह विषय आसान नहीं है, उसकी पूर्वकल्पना तो होती ही है, परन्तु विद्यार्थियों को इस कल्पना से दूर रखने में ही समझदारी होगी | पहले ही यदि विषय को कठिन कहकर उनके सामने परोसा जाएगा, तो इस विषय को सीखने के लिए वे मानसिक रुप से तैयार नही होंगे | अत: अवस्थानुसार ज्ञान दिया जाना चाहिए और उसे रोचक एवं सहज करके भी बताना चाहिए | इससे वे इस विषय की ओर प्रवृत्त होने लगेंगे | तत्पश्चात् उन्हें वो बातें सिखायी जाए, जो वे आसानी से कर पाए | इससे उनका हौसला बढ़ेगा और रुचि भी | यह तभी सम्भव है, जब हम simple to difficult method को अपनाते हैं |

इस आयु वर्ग में विद्यार्थियों का मन भटकता है | उनका मन अनावश्यक विषयों की ओर न जाए इस हेतु संगीत शिक्षकों को विशेष ध्यान रखना चाहिए | अपने विषय को रोचक एवं आकर्षक ढंग से उनके सामने प्रस्तुत किया जाना चाहिए | जिससे उनका इस विषय के प्रति जिज्ञासा बढ़ेगी और अनावश्यक विषयों की ओर उनका ध्यान कम-से-कम जाएगा | विषय को रोचक बनाने में लय एवं लयकारी सहायक होता है | इसके लिए सरल एक, दो, तीन, चार (1,2,3,4) बोलते हुए हाथ पर ठेका देना सीखाना चाहिए | गिनती द्वारा ठाह लय पक्का हो जाने पर उसमें दुगुन, तिगुन, चौगुन आदि लयकारी को गिनती द्वारा पढ़ंत कराना चाहिए | बाद में अनाघात लय का अभ्यास भी कराया जाना आवश्यक होगा | उदाहरणार्थ -

1 2 3 4
X 2 3 4
1 X 3 4
1 2 X 4
1 2 3 X

जहाँ X चिन्ह है वहाँ एक मात्रा अवकाश देना चाहिए जिससे उनमें Beat और off beat का अच्छा अभ्यास हो जाएगा | इसी क्रिया को दो मात्रओं एवं तीन मात्राओं के अवकाश द्वारा भी दुरहाया जाना चाहिए | उदाहरणार्थ -

1 2 3 4
X X 3 4
1 X X 4
1 2 X X
1 X 3 X
X 2 X 4
X 2 3 X

एवं 1 2 3 4
X X X 4
1 X X X

X 2 X X
X X 3 X इत्यादि

इस प्रकार उनको लय एवं लयकारी का ज्ञान हो सकेगा | अब इन संख्याओं के स्थान पर चार स्वर (सा,रे,ग,म) लेकर भी यह क्रिया दुहराई जा सकती है | इस प्रकार विद्यार्थियों में लय के साथ स्वर का भी अच्छा अभ्यास हो जाएगा और यह रोचक भी होगा |

जिस प्रकार चार संख्या एवं चार स्वरों को लेकर यह प्रयोग किया गया, ठीक उसी प्रकार आठ संख्याओं (1,2,3,4,5,6,7,8) एवं आठ स्वरों को लेकर (सा,रे,ग,म,प,ध,नि,सां) भी इसका अभ्यास कराना चाहिए | तत्पश्चात् यही प्रक्रिया रागों में लगने वाले विभिन्न स्वरों के आधारपर भी किया जाए, तो स्वर, लय के साथ-साथ राग ज्ञान वर्द्धन भी होगा | इसी प्रक्रिया में आगे विभिन्न तालों के खण्डानुसार स्वरालंकार, विभिन्न रागों में भी कराया जा सकता है | साथ ही भिन्न-भिन्न तालों में बंदिशों का पाठांतर भी इसी अवस्था में कराया जाना चाहिए |

(म) प्रौढ़ अवस्था

उन्नीस वर्ष से लेकर आगे की अवस्था प्रौढावस्था के अंतर्गत आता है | इस अवस्था में विद्यार्थियों में कल्पनाशक्ति का विकास होता है | अपनी कल्पनाशक्ति के बल पर वे कई कार्यो को करने में सक्षम होने लगते हैं | अत: इसका लाभ लेते हुए उनको रागवाचक स्वर समूहों एवं उनके आधार पर स्वर-विस्तार करने की क्षमता का विकास होना शुरु हो सकेगा | इसी को आगे बढ़ाते हुए विभिन्न बंदिशों के चलनानुसार रागों के चलन को समझने का अवसर भी उनको देना चाहिए | जिससे रागविस्तार में उनको मदद हो सकेगा | राग नियमों के अनुसार, विस्तार किस-किस तरह से हो सकेगा, इसकी पूर्वसुचना देते हुए, उसे गाकर दिखाया जाए, तो वह विद्यार्थियों के लिए सहज ही ग्राहय हो सकेगा |

इतना ही नहीं अपितु, आलाप की निर्मिती किस-किस तरह से की जा सकती है, वादी संवादी स्वरों को राग-विस्तार में किस प्रकार से प्रयोग में लाया जा सकता है, इन सब बातों की कल्पना भी उनको दी जानी चाहिए | एक ही आलाप में न्यास स्वरों के बदलाव से, लय में भेद कर, विभिन्न आलापों की निर्मिती की कल्पना भी उनसे इसी अवस्था में देनी चाहिए | एक ही राग के विविध प्रकार की बंदिशों में निहित राग के विभिन्न चलनों द्वारा रागाभ्यास करने हेतु अनको प्रेरित करना चाहिए |

विविध प्रकार के त्यौहारों, आयोजन एवं अवसरों में तरह-तरह के गानों को सुनने का एक बड़ा अवसर उस वर्ग के विद्यार्थियों को तो सहज ही उपलब्ध होता है | चाहे वह भक्तिगीत हो या भावगीत या फिर सिनेसंगीत, इन सभी प्रकारों का जो संग्रह विद्यार्थियों के पास है, उन स्वर समूहों में छुपे राग तत्व का यदि दर्शन करा दिया जा सहे, तो यह अत्यन्त उत्साहवर्धक तो होगा ही, साथ ही ज्ञानवर्धक भी | अपने परिचित गीत प्रकारों में भी राग के स्वर-समुह को देखकर उन्में उत्साह तो बढ़ेगा ही और वह इस ओर प्रयासरत भी होंगे | ठीक इसी प्रकार उन गीतों में निहीत ताल व लय प्रवाह को समझाकर बताया जाए, तो उनका सांगीतिक बोध समृद्ध होगा | विविध सांगीतिक आयोजनों में अथवा सम्मेलनों में एक कार्यकर्ता के रुप में या अभ्यासक के रुप में इनको संगीत की सेवा करने का अवसर दिया जाना चाहिए | इससे उनका विभिन्न तरह के लोगों एवं कलाकारों से सम्पर्क बढ़ेगा और उनके सान्निध्य में रहकर कई सांगीतिक विषयों का वे अवलोकन एवं चिंतन कर अनुभव प्राप्त कर सकेंगे |

निष्कर्ष -

इस प्रकार शैशव अवस्था, बाल्य अवस्था, कुमार अवस्था एवं प्रौढ़ अवस्था इन चारों अवस्थाओं में विद्यार्थियों के मानसिक अवस्था को ध्यान में रखकर शिक्षणशास्त्र के सिद्धांतो के आधार पर यदि संगीत की शिक्षा दी जाए, तो सांगीतिक मनोविकास सहज- सुलभ हो सकेगा |

संदर्भ ग्रंथ सुचि -

(सा) डॉ राजेन्द्र शर्मा, बाल-विकास एवं मनोविज्ञान, प्रथम संस्करण-1998, प्रकाशक- सवलाइम पब्लिकेशन्स, जयपुर ।
(रे) पंडित विष्णु नारायण भातखंडे, हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति क्रमिक पुस्तक मालिका, अप्रैल 1978, प्रकाशक- एल एन गर्ग, संगीत कार्यालय, हाथरस ।
(ग) सौ लीना कांडलकर, मानव विकास, जुलाई 2000, प्रकाशक क्रमांक 435, प्रकाशक-श्री प्रमोद मुंजे, विद्या प्रकाशन, नागपूर ।
(म) श्रीपाद रामचन्द्र नाईक, सांगीतिक मानस-शास्त्र आणि आधुनिक-संगीत-शिक्षण पद्धति संगीत कला विहार, अगस्त 1958, वर्ष-11, अंक-8
(प) श्रीपाद रामचन्द्र नाईक, सांगीतिक मानस-शास्त्र आणि आधुनिक-संगीत-शिक्षण पद्धति संगीत कला विहार, सितम्बर 1958, वर्ष-11, अंक-9
(ध) श्री. समीर जगताप, संपूर्ण विशारद शास्त्र 'तबला' 15 एप्रिल 2013 प्रकाशक- मधुराज प्रकाशन, पुणे.